में उस अंश के छोटे-से अंश की अभिव्यक्ति है, तुममें बहुत अधिक है, अन्य ईश्वर-मानव में और भी अधिक।"[1]

कर्म के लिए आह्वान —

स्वामी विवेकानन्द का दर्शन कर्म पर सर्वाधिक बल देता है। उसकी विशेषता यह है कि वह केवल चिन्तन को नहीं, अपितु कर्मठ मनुष्य को भी अपनी ओर आकर्षित करता है। विवेकानन्द ज्ञान, भक्ति एवं कर्म को सर्वथा असम्बद्ध मार्ग नहीं मानते। वे इन्हें पूर्णता की ओर ले जानेवाले **एक ही मार्ग के तीन खण्ड** मानते हैं।

पलायन द्वारा मुक्ति का सिद्धान्त विवेकानन्द को सर्वथा अप्रिय है। उन्हीं के प्रेरणादायक शब्दों में—

> "संसार में डूबकर कर्म का रहस्य सीखो। संसार-यन्त्र के पहियों से भागो मत। उसके भीतर खड़े होकर देखो कि वह कैसे चलता है। तुम्हें उससे निकलने का मार्ग अवश्य मिलेगा। विराग की अति हो जाने पर वह निष्ठुर उच्छृंखलता हो जाता है।"

विवेकानन्द इस दलील को रोषपूर्वक ठुकरा देते हैं कि इस जन्म में प्राप्त लौकिक-सुख-सुविधाओं का त्याग कर मनुष्य अगले जन्म में शाश्वत सुख भोग सकता है। उनकी मान्यता है कि इसी तर्क के आधार पर शताब्दियों तक हिन्दू समाज में

व्याप्त सामाजिक भेद-भाव एवं अत्याचार को न्यायोचित ठहराया जाता रहा है। वे कहते हैं कि—

"मैं ऐसे ईश्वर में विश्वास नहीं करता जो स्वर्ग में तो मुझे आनन्द देगा, किन्तु इस संसार में मुझे अन्न भी नहीं दे सकता।"

कर्मठ मनोवृत्ति की स्थापना के हेतु विवेकानन्द वेदान्त की सकारात्मक व्याख्या कहते हैं। उनके अनुसार—

"वेदान्त हमसे यह नहीं कहता कि हम अपने को असहाय मानकर अत्याचारी के सामने घुटने टेक दें। वह कहता है, अपना मस्तक ऊँचा करो। तुममें से हर व्यक्ति के भीतर एक ईश्वर विद्यमान है। उसके योग्य बनो।"[1]

एक सच्चे वेदान्ती को अपने मनुष्यत्व पर गर्व होना चाहिए। उसे पूर्ण उत्साह के साथ सामाजिक कुरीतियों तथा अन्धविश्वासों का विरोध करते हुए उनके उन्मूलन के लिए प्रयास करना चाहिए। विवेकानन्द चुनौती भरे स्वर में कहते हैं—

"यदि मेरे भीतर ईश्वर है तो मैं संसार की लांछनाएँ क्यों सहूँ? उन्हें मिटाना ही मेरा कर्तव्य है।"

इस प्रसंग में यह बतलाना जरूरी है कि आधुनिक भारतीय चिन्तन के क्षेत्र में विवेकानन्द ने ही सर्वप्रथम 'दरिद्र-नारायण' अर्थात् निर्धनों की सेवा का आदर्श स्थापित किया। संन्यास की नये ढंग से परिभाषा करते हुए उन्होंने रामकृष्ण मिशन के सभी सदस्यों को अकाल तथा महामारी से पीड़ित व्यक्तियों की सेवा करने की प्रेरणा दी।

धर्म-परिवर्तन

चूँकि समस्त धर्म सार रूप में एक हैं और 'ईश्वर' की प्राप्ति ही सबका उद्देश्य है, अतः **स्वामी विवेकानन्द 'धर्म परिवर्तन' की आवश्यकता को अस्वीकार करते हैं।** उनके अनुसार "ईसाई को हिन्दू या बौद्ध बनने की ज़रूरत नहीं है, और न ही एक हिन्दू या बौद्ध, ईसाई बने। प्रत्येक को दूसरों की मूल-भावना (Spirit) को आत्मसात् करना चाहिए, और, फिर भी, अपनी वैयक्तिकता (Individuality) को सुरक्षित रखते हुए अपने स्वयं के विकास के नियमों के अनुसार विकसित होना चाहिए। यदि धर्म-सम्मेलन ने विश्व को कुछ भी दिखलाया है तो वह यह कि-इसने विश्व के समक्ष यह प्रमाणित किया है कि शुद्धता, पवित्रता और दयालुता किसी धार्मिक संगठन की सम्पत्ति नहीं हैं और प्रत्येक धार्मिक व्यवस्था ने अत्यधिक उन्नत चरित्र वाले स्त्रियों व पुरुषों को उत्पन्न किया है।" इस परिवेश में यदि कोई यह सोचता है कि केवल उसका धर्म विकसित हो या अन्य धर्म नष्ट हो जाएँ तो वह व्यक्ति दय का पात्र है, उसकी सोच दया की पात्र है।

महिलाओं की उन्नति

स्वामी विवेकानन्द के सामाजिक दर्शन का एक अति महत्वपूर्ण पहलू 'स्त्री-मुक्ति' संबंधित उनके विचारों से संबद्ध है। 19वीं शताब्दी में भारतीय महिलाओं की स्थिति शूद्रों या दासों से किसी भी प्रकार अलग नहीं थी। यही कारण है कि राजा राममोहन राय व उनके बाद के समाज सुधारकों ने स्त्रियों की दशा सुधारने के लिए व्यापक सुधारों को प्रस्तावित किया। स्वामीजी भी महिलाओं की दशा को उन्नत बनाना चाहते हैं। वे स्त्री को 'शक्ति' (Shakti-The Power) के रूप में स्वीकार करते हैं। "शक्ति के बिना विश्व का पुनर्जीवन (Regeneration)संभव नहीं है। क्या कारण है कि हमारा देश विश्व में सर्वाधिक निर्बल व पिछड़ा हुआ है? क्योंकि यहाँ 'शक्ति' को असम्मान से ग्रहण किया जाता है...। मैंने अमेरिका व यूरोप में क्या पाया? 'शक्ति' की उपासना, ताक़त (Power) की आराधना। फिर भी वे इसकी पूजा ऐन्द्रिय-संतुष्टि (Sense-gratification) के माध्यम से करते हैं। तब कल्पना करो कि उन्हें कितनी अपार भलाई प्राप्त होगी जो 'उसकी' पूजा पूर्ण शुद्धता से, सात्विक चेतना *(Sattivika spirit)* से और 'उसे' अपनी माता मानते हुए करते हैं[3]।" इसीलिए उन्होंने अपने शिष्यों व गुरु भाइयों को उपदेश दिया कि वे पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए प्रत्येक स्त्री को माँ के रूप में देखें। क्षमता व गुण के दृष्टिकोण से भी वे स्त्रियों को पुरुषों

से हीन नहीं मानते हैं। अपने समतावादी विचार के कारण ही उन्होंने 'महिला वैराग्य (Women Monasticism) को व्यावहारिक रूप देने का प्रयास किया। उन्होंने कहा कि "हमें स्त्रियों व पुरुषों, दोनों की ज़रूरत है। आत्मा में लिंग-भेद नहीं होता।"

स्वामी विवेकानन्द ने धार्मिक ग्रन्थों द्वारा महिलाओं पर आरोपित समस्त निषेध (प्रतिबन्धों) का विरोध किया। "प्रत्येक व्यक्ति-उच्च व निम्न-के समान महिलाओं को भी प्राचीन आध्यात्मिक संस्कृति को ग्रहण करने, संस्कृत शिक्षा प्राप्त करने व ऋषियों के समस्त आध्यात्मिक आदर्शों की व्यावहारिक अनुभूति करने का अधिकार है। लड़कियों को लड़कों के समान ही ध्यानपूर्वक शिक्षा व समर्थन मिलना चाहिए। स्वामी जी ने बाल-विवाह का भी विरोध किया है। यद्यपि उन्होंने लड़कियों के लिए न्यूनतम आयु का ज़िक्र नहीं किया तथापि वे अमेरिका के बारे में लिखते हैं कि "यहाँ कुछ ही स्त्रियाँ बीस या पच्चीस वर्ष की आयु के पूर्व विवाह करती हैं और वे आकाश के पक्षी की तरह स्वतंत्र हैं... और हम क्या कर रहे हैं? हम अपनी बच्चियों की शादी ग्यारह वर्ष से पूर्व नियमित रूप से करते चले आ रहे हैं ताकि वे पतित या अनैतिक न हो जाएँ[2]।" इसी स्थल पर उन्होंने मनु का उल्लेख करते हुए कहा है कि "जिस प्रकार लड़कों को तीस वर्ष तक ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए उसी प्रकार लड़कियों को भी ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए अपने माता-पिता से शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए[3]।" इससे स्पष्ट होता है कि वे पहले महिलाओं को शिक्षित करना चाहते हैं। फिर उनकी शादी की बात सोची जानी चाहिए। "शिक्षित महिलाएँ अपनी समस्याओं का स्वत: ही समाधान ढूँढ़ लेंगी[4]।" उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा है कि "स्त्रियों की दशा में उन्नति किए बग़ैर भारत की उन्नति नहीं हो सकती। कोई भी पक्षी एक पंख से नहीं उड़ सकता।" फिर भी भारतीय महिलाओं को पश्चिमी स्वतन्त्रता ही चाहिए, उनके सामाजिक मूल्य नहीं। भारत में स्त्रियों की आदर्श सीता व सावित्री हैं

... विवेकानन्द के व्यक्तिगत जीवन को समझना ...

स्वामी विवेकानन्द का जन्म 12 जनवरी, 1963 को कलकत्ते में हुआ था। उनका मूल नाम नरेन्द्रनाथ दत्त था। वे एक अत्यन्त मेधावी छात्र थे तथा अपने कॉलेज-जीवन में उन्होंने कई क्षेत्रों में ख्याति अर्जित की थी। उन्होंने मिल, कांट, हेगेल आदि की रचनाओं का गम्भीर अध्ययन किया था और यूरोपीय विज्ञान,

1. रोम्याँ रोला : लाईफ ऑफ् विवेकानन्द, पृ० 344

में अच्छा तरह स्थापित कर चुके थे। स्वामीजी के भाषणों की प्रशंसा में अमेरिका के समाचार पत्र **द न्यूयार्क हेराल्ड** ने लिखा- ***'सर्व-धर्म-सम्मेलन में सबसे महान् व्यक्ति विवेकानन्द हैं। उनका भाषण सुन लेने पर अनायास ही यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि ऐसे ज्ञानी, देश को सुधारने के लिए धर्म-प्रचारक भेजने की बात कितनी मूर्खतापूर्ण है!'***

इस सम्मेलन के बाद विवेकानंद लगभग तीन वर्ष तक विदेशों में वेदान्त प भाषाण करते रहे। उनके भाषणों, वार्तालापों, लेखों और वक्तव्यों के द्वारा यूरोप अमेरिका में हिन्दू-धर्म और संस्कृति की प्रतिष्ठा स्थापित हुई। फरवरी 1896 उन्होंने न्यूयार्क में **वेदान्त सोसायटी** की स्थापना की जिसका लक्ष्य वेदान्त का प्रच करना था। अमेरिका में उनके अनेक अनुयायी हो गये जो चाहते थे कि कुछ भारत धर्म-प्रचारक, अमेरिका में भारतीय दर्शन तथा वेदान्त का प्रचार करें और उन

मिलते।

(6.) **वेश-भूषा :** ऋग्वैदिक आर्य सुन्दर वस्त्र तथा आभूषण धारण करते थे। ये लोग प्राय: तीन वस्त्र पहनते थे। कमर से नीचे धोती जैसा वस्त्र होता था जिसे **'नीवि'** कहते थे। दूसरा वस्त्र **काम** कहलाता था और तीसरा वस्त्र **अधिवास** अथवा **'द्रापि'** था जिसे शॉल की तरह ओढ़ा जाता था। वे सिर पर पगड़ी भी पहनते थे जिसे **'ऊष्णीय'** कहते थे। ये लोग रंग-बिरंगे ऊनी तथा सूती वस्त्र पहनते थे। कुछ वस्त्रों पर सोने का भी काम किया जाता था जिन्हें वे उत्सव के अवसर पर पहनते थे। स्त्री एवं पुरुष लम्बे बाल रखते थे जिनमें वे तेल डालते थे और कंघी करते थे। स्त्रियाँ चोटी बनाती थीं तथा जूड़ा बांधती थीं और पुरुष अपने बाल कुण्डल के आकार के रखते थे। यद्यपि दाढ़ी रखने की प्रथा थी परन्तु कुछ लोग दाढ़ी मुंडवा भी लेते थे। ऋग्वैदिक आर्य, आभूषणों का भी प्रयोग करते थे जो प्राय: सोने के बने होते थे। भुजबन्ध, कान की बाली, कंगन, नूपुर आदि का प्रयोग स्त्री-पुरुष दोनों करते थे। स्त्रियां सिर पर **कुम्ब** नामक विशेष प्रकार का आभूषण धारण करती थीं।

(5.) **आभूषण निर्माण कला :** पुरातात्त्विक खुदाई और वैदिक ग्रंथों से विशिष्ट शिल्पों के अस्तित्त्व के बारे में जानकारी मिलती है। उत्तर-वैदिक-काल के ग्रंथों में जौहरियों के भी उल्लेख मिलते हैं। ये सम्भवत: समाज के धनी लोगों की आवश्यकताओं को पूरा करते थे। स्त्री पुरुष दोनों आभूषण पहनते थे। उनके आभूषण ऋग्वैदिक-काल के समान ही थे। आभूषणों में कीमती पत्थरों को जड़ा जाता था। इस युग में चाँदी के आभूषणों का प्रयोग बढ़ गया जबकि ऋग्वैदिक-काल में चाँदी के आभूषण बहुत कम थे।

(6.) **मनोरंजन :** आमोद-प्रमोद एवं मनोरंजन के साधनों में ऋग्वेदकाल की तुलना में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया था। पहले की भाँति नृत्य, संगीत, जुआ, घुड़दौड़, रथ-दौड़ आदि मनोरंजन के मुख्य साधन थे।

(7.) **बुनाई कला :** बुनाई का काम केवल स्त्रियाँ करती थीं, फिर भी यह काम बड़े पैमाने पर होता था।

(8.) **काव्य कला :** ऋग्वेद में केवल स्तुति-मन्त्रों का संग्रह है, परन्तु यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, ब्राह्मण-ग्रन्थों तथा सूत्रों की रचना के द्वारा काव्य-क्षेत्र को अत्यन्त विस्तृत कर दिया गया। यजुर्वेद में यज्ञों का विस्तृत विवेचन है। सामवेद गीति-काव्य है। संगीत-कला पर उसका बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा। अथर्ववेद में भूत-प्रेत से रक्षा तथा तन्त्र-मन्त्र का विधान है। ब्राह्मण-ग्रन्थों में उच्चकोटि की दार्शनिक विवेचना है। सूत्रों की रचना इसी काल में हुई। सूत्रों के प्रादुर्भाव से, सूचनाओं को संक्षेप में लिखने की कला की उन्नति हुई।

(9.) **खगोल विद्या :** इस काल में खगोल विद्या की भी उन्नति हुई तथा आर्यों को अनेक नए नक्षत्रों का ज्ञान प्राप्त हो गया।

(10.) **अन्य कलाएं :** उत्तर-वैदिक-काल में चर्मकार, कुम्हार तथा बढ़ई आदि शिल्पों ने बहुत उन्नति की।

(11.) **औषधि विज्ञान :** औषधि-विज्ञान अब भी अवनत दशा में था।

उत्तरवैदिक-काल में आर्यों की धार्मिक दशा

ऋग्वैदिक-काल का धर्म, सरल तथा आडम्बरहीन था परन्तु उत्तर-वैदिक काल का धर्म जटिल तथा आडम्बरमय हो गया। इस काल में उत्तरी दोआब में ब्राह्मण धर्म

बौद्ध धर्म का विदेशों में प्रसार

छठी शताब्दी ईस्वी पूर्व से लेकर छठी शताब्दी ईस्वी तक भिक्षुओं, राजाओं एवं कतिपय विदेशी यात्रियों के प्रयत्नों से बौद्ध धर्म मध्य एशिया, चीन, तिब्बत, बर्मा, अफगानिस्तान, यूनान आदि देशों तथा दक्षिण-पूर्वी एशियाई द्वीपों तक फैल गया। भारत एवं चीन के मार्ग पर स्थित **खोतान प्रदेश** में बौद्ध धर्म का खूब प्रचार हुआ। बौद्ध धर्म के विदेशों में प्रचार का कार्य मगध के **मौर्य सम्राट अशोक** के काल (ई.पू.268-ई.पू.232) में आरम्भ हुआ। अशोक ने बौद्ध धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए श्रीलंका, बर्मा, मध्य एशिया तथा पश्चिमी एशियाई देशों में अपने प्रचारक भेजे। अशोक के शिलालेखों से पता चलता है कि बौद्ध प्रचारकों ने **सीरिया, मेसोपोटामिया** तथा यूनान में **मेसीडोनिया, एरिच** तथा **कोरिन्थ** आदि राज्यों में जाकर बौद्ध धर्म का प्रचार किया। अशोक ने धम्म का दूर-दूर तक प्रचार करने के लिए **धर्म विजय** का आयोजन किया। उसने भारत के भिन्न-भिन्न भागों तथा विदेशों में अपने धर्म के प्रचार का प्रयत्न किया। उसने दूरस्थ विदेशी राज्यों के साथ मैत्री की और वहाँ पर मनुष्यों तथा पशुओं की चिकित्सा का प्रबंध किया। उसने इन देशों में बौद्ध धर्म का प्रचार करने तथा हिंसा को रोकने के लिए उपदेशक भेजे। उसने अपने पुत्र **महेन्द्र** तथा पुत्री **संघमित्रा** को धर्म का प्रचार करने के लिए **सिंहलद्वीप** अर्थात् श्रीलंका भेजा। अशोक के धर्म प्रचारक बड़े ही उत्साही तथा निर्भीक थे। उन्होंने मार्ग की कठिनाईयों की चिन्ता न कर **श्रीलंका, बर्मा, तिब्बत, जापान, कोरिया तथा पूर्वी द्वीप-समूहों** में धर्म का प्रचार किया।

धर्म का सारा इतिहास हिन्दुत्व के लिए इस तड़प से परिपूर्ण रहा है।

गुरु नानक ने मुसलमानों को लक्ष्य करके कहा- **'दया को तुम अपनी मस्जिद मानो, भलाई एवं निष्कपटता को अपनी नमाज की दरी मानो, जो कुछ भी उचित और न्यायसंगत है, वही तुम्हारी कुरान है। नम्रता को अपनी सुन्नत मान ले, शिष्टाचार को अपना रोजा मान ले और इस प्रकार तू मुसलमान बन जाएगा।'** उन्होंने पाँचों नमाजों की व्याख्या करते हुए कहा- **'पहली नमाज सच्चाई है, दूसरी इन्साफ है, तीसरी दया है, चौथी नेक-नीयत है और पाचँवी अल्लाह की बंदगी है।'** गुरु नानक मुसलमानों द्वारा की जाने वाली हिंसा से बहुत व्यथित रहते थे। उनके समय में हिंदुओं का बड़ी संख्या में नरसंहार हुआ। बाबर ने अपनी आत्मकथा **'तुजुके बाबरी'** में इस नरसंहार का वर्णन किया है। उसने हिन्दुओं के सिरों की मीनारें चिनवाईं। बाबरनामा में ऐसी बहुत सी घटनाएं लिखी गई हैं। सिक्खों के 16वीं सदी के ग्रंथों में सिक्खों और मुसलमानों के बीच हुए हिंसक युद्धों के उल्लेख मिलते हैं। बाबर के शासनकाल में हुए हिन्दुओं के नरसंहार के गुरु नानकदेव प्रत्यक्षदर्शी थे। उन्होंने हिंदुओं पर हुए अत्याचारों से व्यथित होकर परमात्मा को सम्बोधित करते हुए लिखा है- **'ऐती मार पई कुरलाणे, तैं कि दर्द न**

जान लगा।

दसम ग्रंथ

आदि ग्रंथ का ज्ञान लेना ही सिक्खों के लिए सर्वोपरि है परंतु सिक्ख हर उस ग्रंथ को सम्मान देते हैं, जिसमें **'गुरमत'** का उपदेश है। गुरु गोबिंदसिंह ने अनेक रचनाएँ लिखीं जिनकी छोटी-छोटी पोथियाँ बना दीं। उन की मृत्यु के बाद उन की धर्मपत्नी **'सुन्दरी'** की आज्ञा से भाई मनीसिंह खालसा और अन्य खालसा शिष्यों ने गुरु गोबिंदसिंह की समस्त रचनाओं को एकत्रित करके एक जिल्द में चढ़ा दिया जिसे **'दसम ग्रन्थ'** कहा जाता है। दसम ग्रंथ की वाणियाँ, यथा जाप साहिब, त परसाद सवैये और चोपाई साहिब सिक्खों के दैनिक **'सजदा'** एवं **'नितनेम'** हिस्सा हैं। ये वाणियाँ **'खंडे बाटे की पहोल'** अर्थात् **'अमृत छकने'** के अवस पढ़ी जाती हैं। तखत हजूर साहिब, तखत पटना साहिब और निहंग सिंह आदि में दसम ग्रन्थ का गुरु ग्रन्थ साहिब के साथ प्रकाश होता है और रोज हुक

कोई भी ग्रंथ पूरी तरह विश्वसनीय नहीं माना जाता। **'श्री गुर सोभा'** ही ऐसा ग्रन्थ है जो गुरु गोबिंदसिंह के निकटवर्ती शिष्य द्वारा लिखा गया है किन्तु इसमें तिथियां नहीं दी गई हैं। सिक्खों के और भी इतिहास विषयक ग्रन्थ हैं। **श्री गुर परताप सूरज ग्रन्थ, गुर-बिलास पातशाही 10, महीमा परकाश, पंथ परकाश,** जनम-सखियाँ इत्यादि। श्री गुर परताप सूरज ग्रन्थ की व्याख्या गुरद्वारों में होती है। कभी **'गुर-बिलास पातशाही दस'** की व्याख्या भी होती थी। सिक्खों का इतिहास लिखने वाले प्रायः सनातनी विद्वान थे। इस कारण उनकी पुस्तकों में गुरुओं एवं भक्तों के चमत्कार लिखे गए हैं जो गुरमत-दर्शन के अनुकूल नहीं हैं। **'जन्मखिओं'** और 'गुर-बिलास' में गुरु नानक का हवा में उड़ना, मगरमच्छ की सवारी करना, माता गंगा को बाबा बुड्ढा द्वारा गर्भवती करना इत्यादि घटनाएं लिखी हैं।

गुरुद्वारा

सिक्खों के धार्मिक स्थान को **'गुरुद्वारा'** कहते हैं। इसमें किसी गुरु या ईश्वर की प्रतिमा नहीं होती अपितु गुरुग्रंथ साहब की प्रति रखी हुई होती है जिसे गुरु मानकर सेवा, प्रणाम किया जाता है तथा उसके समक्ष मत्था टेका जाता है। ग्रंथियों द्वारा **'शबद-कीर्तन'** आयोजित किए जाते हैं। देश में कई प्रसिद्ध गुरुद्वारे हैं जिनमें आनन्दपुर साहब, शीशगंज, तरनतारन, कर्तारपुर साहब, रकाबगंज, बुड्ढा जोहड़ आदि प्रमुख हैं।

स्वर्णमंदिर

चौथे गुरु रामदास ने पंजाब में अमृतसर नामक सरोवर की स्थापना की थी। इसके चारों ओर एक नगर बस गया। इस नगर को भी अमृतसर कहा गया। पांचवें गुरु अर्जुनदेव ने अमृतसर में अकाल तख्त की स्थापना की तथा स्वर्ण मंदि

'आदि ग्रन्थ साहिब ... इकट्ठा कराकर रागबद्ध रूप से सज्जित किया गया। इससे सिक्खों के शास्त्र को मूर्तरूप मिल गया। एक बार किसी ने अकबर से शिकायत की कि इस ग्रन्थ में इस्लाम और अन्य धर्मों की निन्दा की गई है। इस पर अकबर ने गुरु को बुलाकर इस बारे में पूछा। गुरु ने ग्रन्थ खोलकर कहा कि इस चाहे जहाँ से पढ़वा लो। अकबर ने ग्रंथ में एक जगह अपना हाथ रखा। वह भाग पढ़ा गया। इस पंक्ति में निराकार ईश्वर की स्तुति की गई थी। अकबर ने प्रसन्न होकर ग्रन्थ साहिब पर

गुरु हरगोविंद के समय में सिक्ख धर्म

गुरु अर्जुनदेव के बाद छठे गुरु हरगोविन्द हुए। गुरु अर्जुनदेव के साथ
मानुषिक अत्याचार हुए, उससे सिक्खों में नई जागृति उत्पन्न हुई। वे समझ गए कि
केवल जप और माला से धर्म की रक्षा नहीं की जा सकती। इसके लिए तलवार भी
ारण करनी चाहिए और उसके पीछे राज्य-बल भी होना चाहिए। इसलिए गुरु
रगोविन्द ने **'सेली'** (साधु का चोगा) फाड़कर गुरुद्वारे में डाली और शरीर पर योद्धा
ौर योद्धा का परिधान धारण किया। यहीं से सिक्ख-पंथ की प्रेम और भक्ति की
रम्परा ने सैनिक चोला पहन लिया। गुरु हरगोविन्द ने माला और कण्ठी के बद
ो तलवारें रखनी शुरू कीं, एक आध्यात्मिक शक्ति के प्रतीक के रूप में और
ौकिक प्रभुत्व के प्रतीक के रूप में। उन्होंने समस्त **'मञ्झियों'** के **'मसण्डो'**
चारकों) को आदेश दिया कि अब से भक्त, गुरुद्वारे में चढ़ाने के लिए
भेजेंगे अपितु अश्व और अस्त्र-शस्त्र भेजेंगे। उन्होंने पाँच सौ सिक्खों की
यार की और उन्हें सौ-सौ सिपाहियों के दस्तों में संगठित किया। उन्होंने
लोहागढ़ का किला बनवाया तथा लौकिक कार्यों की देख-रेख के लिए
सामने **अकाल तख्त** स्थापित किया।

पुत्रों को ... इस्लाम स्वीकार ... इस पर वजीर खाँ ने उन्हें जीवित ही बालकों से इस्लाम ... इस घृणित प्रस्ताव को ठुकरा दिया। इस पर वजीर खाँ ने उन्हें जीवित ही दीवार में चुनवा दिया गया।

गुरु गोविन्द सिंह ने औरंगजेब की धर्मान्ध नीति के विरुद्ध उसे फारसी भाषा में एक लम्बा पत्र लिखा जिसे **'ज़फ़रनामा'** कहा जाता है। इस पत्र में औरंगजेब के शासन-काल में हो रहे अन्याय तथा अत्याचारों का मार्मिक उल्लेख है। इस पत्र में नेक कर्म करने और मासूम प्रजा का खून न बहाने की नसीहतें, धर्म एवं ईश्वर की आड़ में मक्कारी और झूठ के लिए चेतावनी तथा योद्धा की तरह युद्ध के मैदान में आकर युद्ध करने की चुनौती दी गई है।

औरंगजेब ने एक विशाल सेना गुरु के विरुद्ध भेजी। गुरु परास्त हो गए। औरंगजेब ने सन्धि करने के लिए गुरु को दक्षिण में आमंत्रित किया। गुरु गोविंदसिंह दक्षिण की तरफ रवाना हुए किंतु गुरु द्वारा औरंगजेब से भेंट किए जाने से पहले ही औरंगजेब का निधन हो गया। गुरु गोविन्दसिंह ने उत्तराधिकार के युद्ध में औरंगजेब के पुत्र **बहादुरशाह** के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित की और उसके साथ दक्षिण की तरफ गए परन्तु गोदावरी के किनारे **नानदेड़** नामक स्थान पर दो अफगान पठानों ने ... से वार करके गुरु को घायल कर दिया। गुरु ने अपनी मृत्यु से पहले ही घोषणा